कक्षा-११ **प्रस्तुतकर्ता**

रस

डॉ.सुनील बहल

जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में 'रस' शब्द सर्वोत्तम तत्व के लिए प्रयुक्त होता है। खाने-पीने में 'रस' मधुरतम तरल वस्तु का द्योतक है। संगीत के क्षेत्र में कर्ण इन्द्रियों द्वारा प्राप्त आनन्द को 'रस' की संज्ञा से अभिहित किया गया है। अध्यात्म के क्षेत्र में स्वयं परमात्मा को ही 'रस' या 'रस' को ही परमात्मा कहा गया है। इसी प्रकार साहित्य के क्षेत्र में भी काव्य या नाटक के पठन, श्रवण या देखने से जिस आनन्द की अनुभूति होती है, उसे 'रस' कहते हैं। रस को लौकिक मापदण्डों से मापा नहीं जा सकता इसीलिए इसे अलौकिक कहते हैं।

रस सिद्धांत के प्रवर्त्तक आचार्य भरतमुनि ने 'नाट्यशास्त्र' में रस के विषय में इस प्रकार कहा है-"विभावानुभाव व्यभिचारी संयोगाद् रस निष्पत्ति"। अर्थात विभाव, अनुभाव और व्यभिचारी के संयोग से रस की निष्पत्ति होती है। भरतमुनि ने यह भी कहा है कि स्थायी भाव ही रसत्व को प्राप्त होते हैं। आचार्य विश्वनाथ के अनुसार सहृदयों का हृदय स्थित रति आदि स्थायी भाव, विभावानुभाव तथा संचारी भावों का संयोग प्राप्त कर रस रूप में प्रकट होता है।

विभावानुभावेन व्यक्त: सञ्चारिणा तथा।
रसतामेति रत्यादि: स्थायीभाव: सचेतसाम्।

इस प्रकार रस अभिव्यक्ति के चार साधन हैं-

(1) स्थायी भाव (2) विभाव (3) अनुभाव (4) संचारी भाव

(1) स्थायी भाव- हमारे मन में कुछ भाव सदैव विद्यमान रहते हैं, जिन्हें 'स्थायी भाव' कहते हैं। यह भाव अन्य भावों को अपने में इस तरह समाहित कर लेता है जैसे समुद्र अपने में गिरने वाली नदियों को

आत्मसात् कर लेता है। जिस प्रकार खट्टे पदार्थ के संयोग से दूध दही के रूप में परिवर्तित हो जाता है, उसी प्रकार स्थायीभाव भी विभावानुभाव आदि भावों के योग से रस रूप ग्रहण कर लेता है।

स्थायी भाव तथा उनके आधार पर कल्पित रसों के नाम इस प्रकार हैं–

स्थायी भाव	रस	स्थायी भाव	रस
रति	श्रृंगार	शोक	करुण
हास	हास्य	निर्वेद	शान्त
क्रोध	रौद्र	उत्साह	वीर
विस्मय (आश्चर्य)	अद्भुत	जुगुप्सा	वीभत्स
भय	भयानक		

इसके अतिरिक्त अनेक विद्वानों ने 'वात्सल्य रस' को भी अलग से रस की संज्ञा दी है।

(2) विभाव– विभाव का अर्थ है– कारण । नाटक अथवा काव्य में वाणी, अभिनय, वर्णन आदि के द्वारा व्यक्त होने वाले जिन भावों के कारण सहृदयों को अनुभूति होती है, वे विभाव कहलाते हैं अर्थात जिनके कारण स्थायी भाव प्रकट होकर उद्दीप्त होते हैं, उन्हें विभाव कहते हैं। विभाव दो प्रकार के हैं–

(i) आलम्बन विभाव **(ii) उद्दीपन विभाव**

(i) आलम्बन विभाव– जिस व्यक्ति या वस्तु के आलम्बन से प्रेम, शोक,क्रोध, उत्साह आदि भाव प्रकट होते हैं, उसे 'आलम्बन विभाव' कहते हैं।

इसके भी दो भेद हैं–

(क) विषय **(ख) आश्रय**

जिसके प्रति किसी के भाव मन में जागृत होते हैं, वह विषय कहलाता है। विषय को आलम्बन भी कहते हैं। जिस पात्र या व्यक्ति में किसी के प्रति भाव जागृत होते हैं, वह आश्रय कहलाता है। जैसे–

शकुन्तला को देखकर दुष्यन्त के हृदय में उसके प्रति रतिभाव जागृत होने पर शकुन्तला को 'विषय'(आलम्बन) तथा दुष्यन्त को 'आश्रय' कहा जाएगा।

(ii) उद्दीपन विभाव– जिस वातावरण, ऋतु, संवाद आदि से स्थायी भाव तीव्र होता है, उसे 'उद्दीपन विभाव' कहते हैं। ये भी दो प्रकार के हैं–

(क) आलम्बनगत चेष्टाएँ (ख) बाह्य वातावरण

(क) आलम्बन गत चेष्टाएँ– श्रृंगार रस में दुष्यंत के रतिभाव को अधिक तीव्रता प्रदान करने वाली शकुंतला की कटाक्ष, भुजा विक्षेप आदि चेष्टाएँ उद्दीपन विभाव हैं।

(ख) बाह्य वातावरण– जैसे चाँदनी रात, नदी तट, पुष्प वाटिका, एकांत स्थल आदि बाह्य रमणीय वातावरण उद्दीपन विभाव हैं जो कि आश्रय (दुष्यंत) के स्थायी भावो को उद्दीप्त करते हैं।

(3) अनुभाव– स्थायी भाव के जागृत होने पर जो बाह्य चेष्टाएँ आश्रय में उत्पन्न होती हैं, उन्हें अनुभाव कहते हैं। अनुभाव चार प्रकार के हैं–

(i) आंगिक अनुभाव (ii) वाचिक अनुभाव (iii) आहार्य अनुभाव (iv) सात्विक अनुभाव

(i) आंगिक अनुभाव –शरीर संबंधी स्थूल चेष्टाएँ जैसे– क्रोध में हाथ पटकना, आँखें फाड़ना, कान पकड़ना, भौंहें टेढ़ी करना, भय में भागना आदि आंगिक अनुभाव हैं।

(ii) वाचिक अनुभाव– वाणी का व्यापार जैसे –ऊँचा बोलना, हँसना, गाली देना आदि वाचिक अनुभाव हैं।

(iii) आहार्य अनुभाव– अभिनय में वेश बदलना, बाल सजाना, बिंदी लगाना तथा अन्य अनेक प्रकार के प्रसाधन आहार्य अनुभाव हैं।

(iv) सात्विक अनुभाव– शरीर के स्वाभाविक अंग विकार को सात्विक अनुभाव कहते हैं। इसके अश्रु, स्तम्भ, कम्पन, स्वरभंग, प्रस्वेद, रोमांच तथा प्रलय भेद है।

(4) संचारी भाव– इन्हें व्यभिचारी भाव भी कहा जाता है। **अस्थिर मनोविकार 'संचारी भाव' कहलाते हैं।** संचारी भाव स्थायीभावों के सहकारी कारण हैं। ये उन्हें रस की अवस्था तक पहुँचाते हैं, पर स्वयं बीच में ही जलतरंग की भाँति अदृश्य होते रहते हैं। संचारी भावों की संख्या 33 मानी जाती है– निर्वेद, आवेग, दैन्य, श्रम, मोह, हर्ष, गर्व, मद, जड़ता, उग्रता, शंका, चिन्ता, ग्लानि, विषाद, व्याधि, मति, आलस्य, अमर्ष, ईर्ष्या, धृति, चपलता, निद्रा, स्वप्न, लज्जा, अवहित्था (छिराव, दुराव) विबोध, उन्माद, अपस्मार, स्मृति, उत्सुकता, त्रास, वितर्क तथा मरण। संचारी भावों की यह 33 संख्या कम से कम संख्या की द्योतक है, अन्यथा इनके अनंत रूप हैं। इनके पारस्परिक मिश्रण से ही यह संख्या सहस्र तक पहुँच सकती है।

साहित्यशास्त्रियों के अनुसार प्रत्येक रस का एक स्थायी भाव होता है और स्थायी भाव के साथ आलम्बन विभाव, उद्दीपन विभाव तथा कुछ संचारी भावों का संयोग रहता है। रसों का परिचय इस प्रकार है–

शृंगार रस– शृंगार रस को रसराज की पदवी से विभूषित किया गया है। शृंगार के दो भेद हैं– (1) संयोग (2) वियोग ।

जहाँ नायक–नायिका के मिलन का वर्णन रहता है, वहाँ संयोग शृंगार होता है और जहाँ प्रबल प्रेम के होते हुए भी मिलन के अभाव का वर्णन रहता है, वहाँ वियोग शृंगार होता है।

संयोग तथा वियोग की अवस्था में बहुत भारी अंतर है। दोनों अवस्थाओं की पारस्परिक चेष्टाएँ भिन्न-भिन्न होती हैं। इनके विभाव, अनुभाव और संचारी भाव भिन्न होते हैं। श्रृंगार की दोनों अवस्थाओं के विभिन्न उपादान इस तरह हैं-

(1) स्थायी भाव- रति

(2) विभाव - इसके दो भेद हैं-

(i) आलम्बन विभाव- नायक और नायिका।

(ii) उद्दीपन विभाव- शारीरिक सुन्दरता, चाँदनी रात, एकांत स्थल, नदी तट, वाटिका, कुंज, सुगंधित वायु, वसन्त ऋतु आदि। संयोग श्रृंगार में ये विभाव सुखकर और वियोग में दु:खप्रद प्रतीत होते हैं।

(3) अनुभाव- संयोग में प्रेम पूर्वक बातचीत, मुस्कराना, स्पर्श, आलिंगन करना आदि तथा वियोग में अश्रु, विलाप, स्तम्भ आदि अनुभाव हैं।

(4) संचारी भाव- हर्ष, उत्सुकता, लज्जा आदि संयोग में तथा चिन्ता, ग्लानि, त्रास, जड़ता, विषाद निर्वेद, उन्माद, वितर्क आदि वियोग में संचारी भाव हैं।

अत: रति स्थायी भाव जब विभाव, अनुभाव तथा संचारी भावों से पुष्ट होता है, तो श्रृंगार रस का रूप ग्रहण कर लेता है।

संयोग श्रृंगार का उदाहरण

एक पल मेरे प्रिया के दृग पलक
थे उठे ऊपर सहज नीचे गिरे
चपलता ने इस विकपित पुलक से
दृढ़ किया मानो प्रणय संबंध था।

यहाँ नायिका आलंबन विभाव है, नायिका की सुंदरता उद्दीपन विभाव, नायिका का निरीक्षण अनुभाव तथा लज्जा आदि संचारी भाव हैं। इनसे परिपुष्ट होकर रति स्थायी भाव संयोग श्रृंगार रस के रूप में प्रकट हुआ है।

वियोग श्रृंगार का उदाहरण

मैं निज अलिन्द में खड़ी थी सखि एक रात,
रिमझिम बूँदें पड़ती थीं घटा छाई थी।
गमक रही थी केतकी की गंध चारों ओर
झिल्ली झनकार यही मेरे मनभाई थी।
करने लगी मैं अनुकरण स्व नूपुरों से,
चंचला थी चमकी घनाली घहराई थी।
चौंक देखा मैंने चुप कोने में खड़े थे प्रिय,
माई मुखलज्जा उसी छाती में छिपाई थी।

यहाँ ऊर्मिला आलंबन विभाव है। बूँदों का पड़ना, घटा का छाना, फूलों की सुगंध आदि उद्दीपन भाव हैं। छाती में मुँह छिपाना अनुभाव है। लज्जा, स्मृति, विबोध आदि संचारी भाव हैं। इनसें परिपष्ट होकर रति स्थायी भाव वियोग श्रृंगार रस में प्रकट हुआ है।

करुण रस – जिस रस के आस्वादन से मन में शोक प्रकट हो, उसे करुण रस कहते हैं। करुण रस के स्थायी भाव, विभाव, अनुभाव तथा संचारी भाव इस तरह हैं–

(1) **स्थायी भाव**– शोक

(2) **विभाव–** (i) **आलम्बन विभाव** –प्रिय जन या वस्तु की अनिष्ट हानि अथवा संपूर्ण नाश।

(ii) **उद्दीपन विभाव–** शव–दर्शन, दाह, दु:खपूर्ण दशा, प्रिय बंधुओं का विलाप आदि।

(3) अनुभाव– रोना, छाती पीटना, सिसकियाँ भरना, निश्वास छोड़ना, ज़मीन पर गिरना, बेहोश होना आदि।

(4) संचारी भाव– मोह, निर्वेद, ग्लानि, विषाद आदि।

अतः शोक नामक स्थायी भाव विभाव, अनुभाव और संचारी भावों से अभिव्यक्त होकर करुण रस बन जाता है। जैसे–

अर्ध राति गइ कपि नहिं आयउ। राम उठाइ अनुज उर लायउ।
मम हित लागि तजेहु पितु माता। सहेहु बिपिन हिम आतप बाता।
सो अनुराग कहाँ अब भाई। उठहु न सुनि मम बच बिकलाई।
जैहउँ अवध कवन मुहु लाई। नारि हेतु प्रिय भाई गँवाई।
उतरु काह दैहउँ तेहि जाई। उठि किन मोहि सिखावहु भाई।

इस पद्य में लक्ष्मण के मूर्च्छित होने पर श्रीराम का विलाप दिखवाया गया है। यहाँ शोक का आलंबन लक्ष्मण का मूर्च्छित शरीर है। आधी रात का समय उद्दीपन विभाव है। श्रीराम का विलाप(रोना) अनुभाव है। चिन्ता और ग्लानि संचारी भाव हैं। इनसे परिपुष्ट शोक स्थायी भाव करुण रस में प्रकट होता है।

हास्य रस– जिस रस क आस्वादन से हँसी के भाव उत्पन्न हों, उसे हास्य रस कहते हैं। हास्य रस के स्थायी भाव, विभाव, अनुभाव तथा स्थायी भाव इस प्रकार हैं।

(1) स्थायी भाव– हास

(2) विभाव–(i) आलम्बन विभाव– विकृत आकार या वेशभूषा वाला अथवा विकृत वाणी बोलने वाला व्यक्ति और विकृत रूप वाली वस्तु।

(ii) उद्दीपन विभाव– विचित्र वेशभूषा, विचित्र उक्तियाँ तथा चेष्टाएँ।

(3) अनुभाव – अट्टहास करना, आँखों का खिलना, शरीर का हिलना, दाँतों का दिखाना, व्यंग्य वचन बोलना ।

(3) संचारी भाव– हास्यजनित अश्रु, स्वेद, रोमांच आदि।

अतः इनसे परिपुष्ट होकर हास स्थायी भाव हास्य रस का रूप ग्रहण कर लेता है। जैसे-

नहिं विद्या नहिं बाहुबल, बिन धन करत कमाल
केवल मूँछ मुँडाए कै, बनत जवाहरलाल।

यहाँ विद्या, बाहुबल और धन से हीन जवाहरलाल बनने की कामना रखने वाला व्यक्ति आलंबन है, उसका मूँछ मुँडाना उद्दीपन विभाव ह। उसकी इस मूर्खता से देखने वालों के मुख से हँसी छूटना अनुभाव है तथा श्रम, चपलता आदि इसके संचारी भाव हैं। इन भावों से परिपुष्ट होकर हास स्थायी भाव हास्य रस के रूप में प्रकट हुआ है।

शान्त रस- जहाँ सब जीवों में समान भाव वर्णित हो, वहाँ शांत रस होता है।

शांत रस के स्थायी भाव, आलम्बन विभाव, उद्दीपन विभाव, अनुभाव तथा संचारी भाव इस तरह हैं-

(1) स्थायी भाव - निर्वेद

(2) विभाव-(i) आलम्बन विभाव- संसार की निस्सारता, अथवा परमात्म -चिंतन ।

(ii) उद्दीपन विभाव - शांत स्थान, तपोवन,आश्रम, तीर्थ, शास्त्र, उपदेश, सत्संग।

(3) अनुभाव - स्वाध्याय, गृह-त्याग, विरक्ति, समाधि लगाना, विषयों के प्रति अरुचि प्रदर्शित करना।

(4) संचारी भाव-' हर्ष, स्मरण, धैर्य, विबोध। जैसे-

हाथी न साथी न घोरे न चेरे गाँव न ठाँव को नाँव बिलैहै।
तात न मात न पुत्र वित्त न अंग के संग रहै है।
'केसव' काम को राम विसारत और निकाम ते काम न ऐहैं।
चेत रे चेत अजौं चित अन्तर अन्तक लोक अकेलोइ जैहै।।

उपर्युक्त उदाहरण में अनित्य सांसारिक वैभव आलंबन विभाव हैं। हाथी, घोड़े, मित्र, नौकरधन तथा अन्य रिश्तों का शरीर के संग ही छूट जाना उद्दीपन भाव है। यह कथन अनुभाव है तथा शंका, तर्क आदि संचारी भाव हैं।

रौद्र रस– जिस रस के आस्वादन से क्रोध प्रकट हो, उसे रौद्र रस कहते हैं। रौद्र रस के स्थायी भाव, आलम्बन तथा उद्दीपन विभाव, अनुभाव व संचारी भाव इस तरह हैं–

(1) **स्थायी भाव** – क्रोध

(2) **विभाव–** (i) **आलम्बन विभाव** – अनिष्ट करने वाला व्यक्ति, दुराचारी, प्रतिपक्षी, शत्रु, अपराधी, दुष्ट व्यक्ति।

(ii) **उद्दीपन विभाव**– आलंबन की चेष्टाएँ, कटु वचन, अपमानजनक व्यवहार, अकड़ना तथा क्रोध को भड़काने वाली अन्य चेष्टाएँ।

(3) **अनुभाव**– ललकारना, दाँत पीसना, भौंहें तानना, मुख लाल हो जाना, आँखों का लाल हो जाना, गरजना, हथियार चलाना आदि।

(4) **संचारी भाव** – उग्रता, गर्व, अमर्ष, मद, आवेग, चपलता, मोह आदि।

उपर्युक्त विभाव, अनुभाव, संचारी भावों से परिपुष्ट होकर क्रोध स्थायी भाव रौद्र रस रूप से परिणत हो जाता ह। जैसे–

बहुरि बिलोकि बिदेहसन कहहु काह अति भीर।
पूछत जानि अजान जिमि ब्यापेउ कोपु सरीर।
समाचार कहि जनक सुनाए। जेहि कारन महीप सब आए।
सुनत बचन फिरि अनत निहारे। देखि चाप खंड महि डारे।
अति रिस बोले बचन कठोर। कहु जड़ जनक धनुष कै तोरा।
बेगि देखाउ मूढ न त आजू। उलटउँ महि जहँ लहित तव राजू।
अति डरु उतर देत नृप नाहीं । कुटिल भूप हरषे मन माहीं।

यहाँ चाप- खंड आलंबन है। परशुराम आश्रय है। जनक का कथन उद्दीपन विभाव है। परशुराम का कथन व चेष्टाएँ कायिक अनुभाव हैं। कोप की व्यंजना सात्विक अनुभाव है। भय, त्रास एवं चिंता संचारी भाव हैं। इनसे परिपुष्ट होकर क्रोध स्थायी भाव रौद्र रस को प्रकट करता है।

वीर रस– जिन भावों से वीरता प्रकट हो, वहाँ वीर रस होता है। वीर रस का स्थायी भाव उत्साह है।

विशेष– उत्साह के विषय भिन्न-भिन्न हैं। शत्रु से युद्ध करने में, धर्म की रक्षा के लिए, दीन-हीन की दशा से द्रवित होकर दान देने में , कर्तव्य- पालन इत्यादि में उत्साह का प्रदर्शन हो सकता है। अत: वीर रस के चार भेद हो सकते हैं-

(1) युद्ध (2) दया (3) धर्म (4) दान

इन चारों के आलंबन इत्यादि भिन्न-भिन्न होते हैं। 'युद्ध वीर' इनमें प्रमुख है। अत: यहाँ केवल उसी का वर्णन किया जा रहा है। इसके स्थायी भाव, आलंबन विभाव, उद्दीपन विभाव व संचारी भाव इस प्रकार हैं-

(1) स्थायी भाव - उत्साह

(2) विभाव– (i) आलम्बन विभाव- युद्ध स्थल, हथियार, शत्रु आदि।

(ii) उद्दीपन विभाव - शत्रु की चेष्टाएँ; जैसे सेना, ललकारना, नगाड़ों की आवाज़, हथियारों का चलाना।

(3) अनुभाव - भुजाओं का संचालन, आँखों की लाली आदि।

(4) संचारी भाव - गर्व, उग्रता, धैर्य, आदि।

उपर्युक्त विभाव, अनुभाव व संचारी भाव से परिपुष्ट उत्साह स्थायी भाव 'वीर रस' का रूप ग्रहण कर लेता है। जैसे-

रघुबंसिन्ह महुँ जहँ कोउ होई। तेहिं समाज अस कहइ न कोई।

कहीं जनक जसि अनुचित बानी। विद्यमान रघुकुल मनि जानी।
सुनहु मानकुल पंकज भानू। कहऊँ सुभाउ न कछु अभिमानू।
जौं तुम्हारि अनुसासन पावौं। कदुक इव ब्रह्मांड उठावौं।
काचे घट निमि डारौं फौरी। सकऊँ मेरु मूलक जिमि तोरी
तब प्रताप महिमा भगवाना। को बापुरो पिनाक पुराना।
नाथ जानि अस आयसु होऊ। कौतुक करौं बिलौकिऊ सोऊ।
कमल नाल जिमि चाप चढ़ावौं। गोजन सत प्रमान लै धावौं।
तोरौं छचक दण्ड जिमि तव प्रताप बल नाथ।
जौं न करौं प्रभुपद सपथ कर न धरौं धनु माथ।

यहाँ जनक का कथन आलम्बन है, राज-समाज उद्दीपन विभाव है। लक्ष्मण की गर्वोक्ति अनुभाव है। आवेग, उग्रता संचारी भाव हैं। इनसे परिपुष्ट उत्साह स्थायी भाव वीर रस को प्रकट करता है।

अद्भुत रस– जिस रस के आस्वादन से आश्चर्य प्रकट हो, उसे अद्भुत रस कहते हैं। अद्भुत रस के स्थायी भाव, विभाव, अनुभाव व संचारी भाव इस प्रकार हैं–

(1) **स्थायी भाव** - विस्मय (आश्चर्य)

(2) **विभाव–** (i) **आलम्बन विभाव-** अलौकिक दृश्य, विचित्र वस्तु, अलौकिक व्यक्ति।

(ii) **उद्दीपन** - अलौकिक या अद्भुत चरित्र या वस्तु के सम्बन्ध में बार बार श्रवण एवं विचार उत्पन्न होना।

(3) **अनुभाव** - अवाक् रह जाना, भौंहें ऊपर उठ जाना, विस्फारित नेत्रों से देखना, स्तब्धता, दाँतों तले अँगुलि दबाना, मुख खुला रह जाना आदि।

(4) **संचारी भाव** - मोह, आवेग, हर्ष, वितर्क, त्रास, प्रलाप, चपलता आदि।

उपर्युक्त विभाव तथा अनुभाव संचारी भावों से परिपुष्ट विस्मय स्थायी भाव अद्भुत रस में परिणत हो जाता है। जैसे-

उस एक ही अभिमन्यु से यों युद्ध जिस जिसने किया,
मारा गया अथवा समर स विमुख होकर ही जिया।
जिस भाँति विद्युद्दाम से होती सुशोभित घनघटा,
सर्वत्र छिटकाने लगा वह समर में शस्त्रच्छटा।
तब कर्ण द्रोणाचार्य से साश्चर्य यों कहने लगा।
आश्चर्य देखो तो नया यह सिंह सोते से जगा।

इसमें अभिमन्यु आलंबन विभाव, अनेक योद्धाओ से युद्ध में लड़ना उद्दीपन विभाव, कर्ण का आश्चर्य के साथ देखना अनुभाव तथा शंका, चिंता, वितर्क संचारी भाव हैं। इनसे परिपुष्ट होकर विस्मय स्थायी भाव अद्भुत रस को प्रकट करता है।

वीभत्स रस- जिस रस के आस्वादन से घृणा का भाव प्रकट हो उसे वीभत्स रस कहते हैं।

वीभत्स रस के स्थायी भाव, विभाव, अनुभाव व संचारी भाव इस प्रकार हैं-

(1) **स्थायी भाव** - जुगुप्सा या घृणा

(2) **विभाव-** (i) **आलम्बन विभाव**-खून, शव, दुर्गन्धमय वस्तुएं, घृणा योग्य व्यक्ति।

(ii) **उद्दीपन-** अरुचिकर वस्तुओं की चर्चा या दर्शन जैसे कृमि, मक्खियाँ आदि।

(3) **अनुभाव** - थूकना, मुँह फेरना, छि: छि: कहना, नाक पर हाथ या कपड़ा रखना, नाक सिकोड़ना, मुख बंद करना इत्यादि।

(4) संचारी भाव – ग्लानि, आवेग, मूर्च्छा इत्यादि।

उपर्युक्त विभाव, अनुभाव व संचारी भाव से परिपुष्ट होकर जुगुप्सा या घृणा स्थायी भाव वीभत्स रस में परिणत हो जाता है। जैसे–

सिर पै बैठ्यो काग, आँख दोउ खात निकारत।
खेंचत जीनहिं स्यार, अतिहि आनन्द उर–धारत।
गिद्ध जाँघ कहें खोदि–खोदि के माँस उपारत।
स्वान आँगुरिन काटि–काटि के खाँन बिदारत।
बहु चील नोंचि लै जात नुच मोद भरया सबको हियो।
मनु ब्रह्म–भोज जिजमान कोउ, आजु भिखारिन कँह दियो।

यहाँ शवों की हड्डी, माँस तथा श्मशान दृश्य आलंबन हैं। शव के अंगों का काक, सियार, स्वान आदि पशु–पक्षियों के द्वारा नोचना तथा खाना आदि उद्दीपन हैं। श्मशान का दृश्य देखकर राजा का इनके बारे में सोचना अनुभाव तथा ग्लानि, आवेग, उग्रता, स्मृति आदि संचारी भाव हैं। इनसे परिपुष्ट होकर राजा के मन में उठने वाला घृणा स्थायी भाव वीभत्स रस में परिणत हुआ है।

भयानक रस – जिस रस के आस्वादन में इंद्रिय क्षोभ या भयजनक प्रसंगों का वर्णन हो, उसे भयानक रस कहते हैं। इसके स्थायी भाव, विभाव, अनुभाव व संचारी भाव इस प्रकार हैं–

(1) स्थायी भाव – भय।

(2) विभाव – (i) आलम्बन विभाव – भयानक व्यक्ति, जानवर या वस्तु आदि।

(ii) उद्दीपन – भयानक आलंबन की चेष्टाएं, निर्जनता, विकृत और उग्र ध्वनि।

(3) अनुभाव – काँपना, प्रलय, स्वेद, विकलता आदि।

(4) संचारी भाव- आवेग, त्रास, शंका, दीनता, वितर्क आदि।

उपर्युक्त विभाव, अनुभाव, संचारी भावों से परिपुष्ट होकर भय स्थायी भाव भयानक रस रूप को ग्रहण कर लेता है। जैसे-

एक ओर अजगरहिं लखि एक ओर मृगराय।
विकल बटोही बीच ही पर्‌यो मूरछा खाय।

यहाँ विकल बटोही आश्रय है। अजगर और सिंह आलंबन विभाव हैं। अजगर और सिंह की चेष्टाएं उद्‌दीपन विभाव हैं। बटोही का मूर्च्छित होना अनुभाव है। त्रास, शंका, आवग आदि संचारी भाव हैं। इनसे परिपुष्ट होकर स्थायी भाव भयानक रस को प्रकट हुआ है।

प्रस्तुतकर्ता
डॉ.सुनील बहल
स्टेट रिसोर्स पर्सन
(हिंदी और पंजाबी)